

3 एस. सी. आर. सर्वोच्च न्यायालय प्रतिवेदन

देवता प्रसाद सिंह चौधरी और अन्य

बनाम

माननीय मुख्य न्यायाधीश और पटना उच्च न्यायालय के न्यायाधीश

29 अगस्त, 1961

(बी. पी. सिन्हा, मुख्य न्यायाधीश, एस. के. दास, ए. के. सरकार, एन. राजगोपाला अयंगर

एवं जे. आर. मुधोलकर, न्यायमूर्तिगण)

मुख्तार-दीवानी न्यायालय में अभ्यास करने का अधिकार-विधि व्यवसायी

अधिनियम, 1879 (1879 का XVIII), धारा 9 , 11- पटना उच्च न्यायालय के सामान्य

नियम और परिपत्र आदेश, अध्याय III भाग VII, नियम 2।

विधि व्यवसायी अधिनियम, 1879 की धारा 9 विधिवत नामांकित मुख्तार को किसी भी दीवानी न्यायालय में "अभ्यास" करने का अधिकार देती है और धारा 11 इसके अंतर्गत उच्च न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों में कार्यरत मुख्तारों के "कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों" को घोषित करने वाले नियम बनाने का अधिकार है। धारा 11 के तहत बनाए गए नियम 2 में यह प्रावधान है कि किसी मुख्तार को किसी भी दीवानी न्यायालय को संबोधित करने की अनुमति नहीं होगी, सिवाय "अपने आवेदन की प्रकृति और प्रभाव बताने या कोई कानूनी तर्क प्रस्तुत करने या किसी गवाह की जांच करने" के उद्देश्य से, न्यायालय की अनुमति के बिना। याचिकाकर्ताओं ने तर्क दिया कि नियम 2, धारा 11 के तहत नियम बनाने की शक्ति का उल्लंघन है और संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (जी) के तहत उनके अधिकारों पर एक अनुचित प्रतिबंध है।

अभिनिर्धारित किया गया कि, अधिनियम की धारा 9 और 11 को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए और धारा 9 के तहत दिया गया 'अभ्यास' का अधिकार, धारा 11 के तहत परिकल्पित मुख्तारों के 'कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों' से अलग नहीं किया जा सकता।

मुख्तार के कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों की घोषणा करते समय, उच्च न्यायालय अपने नियमों द्वारा उन्हें इस प्रकार सीमित कर सकता है जिससे दीवानी न्यायालयों में उनके अभ्यास के अधिकार को विनियमित किया जा सके, और ऐसा परिसीमन अधिनियम के तहत अनुमत उनके पेशे का अभ्यास करने के मौलिक अधिकार का उल्लंघन नहीं है।

अश्विनी कुमार घोष बनाम अरविंदा बोस, (1953) एस.सी.आर.1, स्पष्ट किया गया और अंतर बताया गया।

मूल क्षेत्राधिकार: 1958 की याचिका संख्या 117

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन हेतु याचिका।

याचिकाकर्ताओं की ओर से - आर. के. गर्ग, एम. के. राममूर्ति, एस. सी. अग्रवाल और डी. पी. सिंह।

उत्तरदाता उपस्थित नहीं हुआ।

1961, 29 अगस्त। न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एस. के. दास द्वारा दिया गया।

--- यह विनिर्दिष्ट आदेश याचिका बिहार राज्य मुख्तार संघ, पटना और उसके उपाध्यक्ष एवं महासचिव की ओर से दायर की गई है। याचिका की सुनवाई एकतरफा की गई है क्योंकि याचिका में उत्तरदाता के रूप में नामित पटना उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और न्यायाधीश उपस्थित नहीं हुए।

याचिकाकर्ताओं का तर्क है कि पटना उच्च न्यायालय द्वारा 1922 में विधि व्यवसायी अधिनियम, 1879 (अधिनियम XVIII) की धारा 11 के तहत बनाए गए कुछ नियम, जिन्हें आगे अधिनियम कहा गया है, अधीनस्थ न्यायालयों में अभ्यास करने वाले मुख्तारों के कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों के संबंध में अब अमान्य और शून्य हैं, क्योंकि वे याचिकाकर्ताओं के मौलिक अधिकार का उल्लंघन करते हैं, जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1)(जी) के

तहत गारंटीकृत है और इसके खंड (6) द्वारा संरक्षित नहीं हैं। याचिकाकर्ताओं ने विशेष रूप से अधिनियम की धारा 11 के तहत उक्त उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियम 2 की वैधता को चुनौती दी है, और इसे पटना उच्च न्यायालय (दीवानी), 1922 के सामान्य नियमों और परिपत्र आदेशों के अध्याय III, भाग VII में शामिल किया गया है। याचिकाकर्ताओं ने प्रार्थना की है कि इस न्यायालय द्वारा उचित विनिर्दिष्ट आदेश, निर्देश या आदेश जारी किया जाए, जिसमें यह घोषित किया जाए कि उपरोक्त नियम 2 असंवैधानिक है और इसलिए शून्य एवं अप्रभावी है। हम अभी नियम पढ़ेंगे; लेकिन इससे पहले कुछ ऐसे तथ्य बताए जा सकते हैं जिन पर कोई विवाद नहीं है।

याचिकाकर्ताओं का कहना है कि बिहार राज्य मुख्तार संघ का गठन लगभग 30 वर्ष पहले बिहार राज्य में पटना उच्च न्यायालय के अधीनस्थ न्यायालयों में अभ्यास करने वाले मुख्तारों के हितों की रक्षा के उद्देश्य से किया गया था। अधिनियम की धारा 3 के अंतर्गत आने वाले मुख्तारों के हितों की रक्षा करना। अपने विभिन्न वार्षिक सम्मेलनों में उक्त संघ ने उच्च न्यायालय में उपरोक्त नियम 2 द्वारा अधीनस्थ दीवानी न्यायालयों में अभ्यास करने वाले मुख्तारों के अधिकार पर लगाए गए प्रतिबंध को हटाने के लिए प्रस्ताव पारित किए। उच्च न्यायालय ने प्रतिबंध नहीं हटाया। 27 जुलाई, 1958 को एसोसिएशन की एक आपातकालीन कार्यकारी समिति की बैठक में, संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दायर करने का संकल्प लिया गया। वर्तमान विनिर्दिष्ट आदेश याचिका उसी संकल्प के अनुसरण में दायर की गई है।

मुख्तारों का नामांकन अधिनियम के कुछ प्रावधानों के तहत किया जाता है, जिनका अब उल्लेख किया जाना आवश्यक है। अधिनियम की धारा 3 के अनुसार, "अधीनस्थ न्यायालय" से तात्पर्य उच्च न्यायालय के सभी अधीनस्थ न्यायालयों से है, जिनमें अधिनियम IX, 1850 या अधिनियम XI, 1865 के तहत स्थापित लघु वाद न्यायालय भी शामिल हैं। "विधि व्यवसायी" से तात्पर्य किसी उच्च न्यायालय के अधिवक्ता, वकील या

अटॉर्नी, प्लीडर, मुख्तार या राजस्व एजेंट से है। अधिनियम की धारा 6 उच्च न्यायालय को समय-समय पर अधिनियम के अनुरूप कुछ मामलों के संबंध में नियम बनाने का अधिकार देती है, जिनमें अन्य बातों के अलावा अधीनस्थ न्यायालयों के मुख्तार बनने के लिए उपयुक्त व्यक्तियों की योग्यता, प्रवेश और प्रमाण पत्र शामिल हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि अधिनियम की धारा 6 के अंतर्गत बनाए गए एक नियम द्वारा पटना उच्च न्यायालय ने यह निर्धारित किया कि कोई भी व्यक्ति जो उच्च न्यायालय द्वारा गठित समिति से यह प्रमाण पत्र प्रस्तुत करे कि उसने उच्च न्यायालय द्वारा समय-समय पर निर्धारित विषयों में मुख्तारशिप परीक्षा उत्तीर्ण की है, उसे उच्च न्यायालय के अधीनस्थ न्यायालयों में अभ्यास करने के लिए मुख्तार के रूप में प्रवेश दिया जा सकता है। नियम 10 में उन विषयों का उल्लेख किया गया था जिनमें परीक्षा आयोजित की जानी थी। यह परीक्षा मुख्तारशिप परीक्षा के नाम से जानी जाती थी। इसे वर्ष 1947-48 में समाप्त कर दिया गया था। अधिनियम की धारा 7 के अंतर्गत, उच्च न्यायालय ने उन मुख्तारों को प्रमाण पत्र प्रदान करने के लिए कुछ नियम बनाए थे जिन्होंने उपरोक्त नियमों द्वारा निर्धारित प्रवेश के लिए आवश्यक परीक्षा उत्तीर्ण की थी। धारा 7 में ऐसे प्रमाण पत्रों के वार्षिक नवीनीकरण का भी प्रावधान था। याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता का तर्क मुख्य रूप से धारा 9 के प्रावधानों पर आधारित है और उन्हें पूर्ण रूप से उद्धृत किया जाना चाहिए।

“धारा 7 के तहत जारी प्रमाण पत्र रखने वाला प्रत्येक मुख्तार उसमें उल्लिखित और उसी सीमा के भीतर स्थित किसी भी दीवानी या आपराधिक न्यायालय में नामांकन के लिए आवेदन कर सकता है; और, उच्च न्यायालय द्वारा समय-समय पर इस संबंध में बनाए गए नियमों के अधीन रहते हुए, पीठासीन न्यायाधीश उसे तदनुसार नामांकित करेगा; और इसके बाद वह किसी भी दीवानी न्यायालय और उसके अधीनस्थ किसी भी न्यायालय में मुख्तार के रूप में अभ्यास कर सकता है, और (दंड प्रक्रिया संहिता के

प्रावधानों के अधीन रहते हुए) किसी भी आपराधिक न्यायालय और उसके अधीनस्थ किसी भी न्यायालय में उपस्थित हो सकता है, पैरवी कर सकता है और कार्य कर सकता है।”

धारा 10 में संक्षेप में कहा गया है कि अधिनियम या किसी अन्य अधिनियम द्वारा समय-समय पर लागू प्रावधानों को छोड़कर, कोई भी व्यक्ति किसी भी न्यायालय में मुख्तार के रूप में तब तक अभ्यास नहीं करेगा जब तक कि उसके पास धारा 7 के तहत जारी प्रमाण पत्र न हो और वह ऐसे न्यायालय या किसी ऐसे न्यायालय में नामांकित न हो जिसके अधीन वह न्यायालय है। इसके बाद धारा 11 आती है, जिसके अंतर्गत आक्षेपित नियम बनाया गया था। यह धारा इन शब्दों में है।

“दीवानी प्रक्रिया संहिता में किसी भी बात के होते हुए भी, उच्च न्यायालय समय-समय पर ऐसे नियम बना सकता है जिनमें यह घोषित किया गया हो कि अधीनस्थ न्यायालयों में अभ्यास करने वाले मुख्तारों के कार्य, शक्तियाँ और कर्तव्य क्या होंगे, और यदि उच्च न्यायालय की स्थापना राजपत्र द्वारा नहीं की गई है, तो ऐसे न्यायालय में।”

पटना उच्च न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायालयों में अभ्यास करने वाले मुख्तारों के कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों को परिभाषित करने वाले कई नियम बनाए। इनमें से एक नियम 2 है, जो इस प्रकार है।

“नियम 2: किसी मुख्तार को किसी भी दीवानी न्यायालय को संबोधित करने की अनुमति नहीं दी जाएगी, सिवाय अपने आवेदन की प्रकृति और प्रभाव बताने के उद्देश्य से, या कोई कानूनी तर्क प्रस्तुत करने के लिए, या न्यायालय की विशेष अनुमति के बिना किसी गवाह की जांच करने के लिए।”

याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता का तर्क यह है कि अधिनियम की धारा 9 के तहत धारा 7 के अधीन जारी प्रमाण पत्र रखने वाले प्रत्येक मुख्तार को उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी भी दीवानी या आपराधिक न्यायालय में नामांकन के लिए आवेदन करने का अधिकार है और नियमों के अनुसार नामांकन होने पर, उसे किसी भी दीवानी न्यायालय और उसके अधीनस्थ न्यायालयों में मुख्तार के रूप में अभ्यास करने का अधिकार है और साथ ही किसी भी आपराधिक न्यायालय में पेश होने, पैरवी करने और कार्यवाही करने का भी अधिकार है। याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि अभ्यास के इस अधिकार को सीमित नहीं किया जा सकता है और धारा 11, जो उच्च न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों में अभ्यास करने वाले मुख्तारों के कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों को निर्धारित करने वाले नियम बनाने का अधिकार देती है, उच्च न्यायालय को ऐसा नियम बनाने का अधिकार नहीं देती है जो धारा 9 द्वारा दिए गए अधिकार को सीमित करता हो। उनका तर्क यह भी है कि आक्षेपित नियम मुख्तार के दीवानी न्यायालयों में अभ्यास करने के अधिकार को सीमित करता है, क्योंकि इसमें कहा गया है कि मुख्तार को किसी भी दीवानी न्यायालय को संबोधित करने की अनुमति नहीं होगी, सिवाय अपने आवेदन की प्रकृति और प्रभाव बताने, कोई कानूनी तर्क प्रस्तुत करने या न्यायालय की विशेष अनुमति के बिना किसी गवाह की जांच करने के उद्देश्य से। उन्होंने तर्क दिया है कि पहला नियम धारा 11 के तहत नियम बनाने की शक्ति का उल्लंघन है और दूसरा, यह संविधान के अनुच्छेद 19(1)(जी) के तहत गारंटीकृत अधिकार पर एक अनुचित प्रतिबंध है।

निर्णय के लिए सरल प्रश्न वास्तव में यह है: क्या आक्षेपित नियम अधिनियम की धारा 11 के तहत उच्च न्यायालय को दी गई शक्तियों का उल्लंघन करता है? यदि नियम अधिनियम के दायरे में है, तो स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ताओं के किसी भी मौलिक अधिकार का उल्लंघन नहीं हुआ है। अधीनस्थ न्यायालयों में अभ्यास करने का याचिकाकर्ताओं का अधिकार अधिनियम द्वारा सृजित किया गया था। हमारे समक्ष प्रस्तुत तर्कों में अधिनियम की

धारा 11 की संवैधानिक वैधता को चुनौती नहीं दी गई थी, क्योंकि यह एक गारंटीकृत अधिकार पर अनुचित प्रतिबंध की अनुमति देती है, यदि उचित व्याख्या के आधार पर वह धारा उच्च न्यायालय को मुख्तारों के अभ्यास के अधिकार को विनियमित करने में सक्षम बनाती है। हमारे समक्ष शिकायत यह थी कि आक्षेपित नियम 2 अधिनियम की धारा 11 द्वारा उचित नहीं ठहराया गया था। इसलिए, हमें केवल इस प्रश्न पर विचार करना है कि क्या आक्षेपित नियम अधिनियम की धारा 11 द्वारा प्रदत्त अधिकार का उल्लंघन करता है। हमें लगता है कि आक्षेपित नियम स्पष्ट रूप से उस अधिकार क्षेत्र के भीतर है। याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने धारा 9 द्वारा प्रदत्त अभ्यास के अधिकार और धारा 11 में उल्लिखित कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों के बीच अंतर करने का प्रयास किया है। *अश्विनी कुमार घोष और अन्य बनाम अरविंदा बोस और अन्य*¹ के मामले में बहुमत के फैसले पर भरोसा करते हुए, उन्होंने यह तर्क दिया है कि अभ्यास करने के अधिकार का अर्थ है अधीनस्थ न्यायालयों में उपस्थित होने, पैरवी करने और वादियों की ओर से कार्य करने का अधिकार; अधीनस्थ न्यायालयों में अभ्यास करने वाले मुख्तारों के कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों के संबंध में अधिनियम की धारा 11 के तहत नियम बनाने की उच्च न्यायालय की शक्ति का अर्थ केवल यह है कि उच्च न्यायालय धारा 9 के तहत दिए गए अधिकार को नियम बनाकर प्रभावी कर सकता है, लेकिन वह उस अधिकार को सीमित नहीं कर सकता; इसलिए जब उच्च न्यायालय ने दीवानी न्यायालयों में पैरवी करने के मुख्तारों के अधिकार को प्रतिबंधित करने वाला आक्षेपित नियम बनाया, तो उसने धारा 11 द्वारा दी गई शक्तियों का उल्लंघन किया।

हम इस तर्क को सही नहीं मानते। अधिनियम की धारा 9 और 11 को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए और धारा 11 द्वारा प्रदत्त अभ्यास के अधिकार को धारा 11 में उल्लिखित मुख्तारों के कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों से अलग मानना गलत होगा। याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता दोनों धाराओं को इस प्रकार पढ़ रहे हैं मानो एक धारा

1 [1953] एस.सी.आर.1

पूर्ण अधिकार देती है और दूसरी धारा केवल उस अधिकार को प्रभावी बनाने के लिए नियम बनाने का अधिकार देती है। हमें नहीं लगता कि यह दोनों धाराओं का उचित अर्थ है। यह उल्लेखनीय है कि धारा 9 के अंतर्गत ही मुख्तार के दीवानी न्यायालयों में अभ्यास करने के अधिकार और किसी भी आपराधिक न्यायालय में उपस्थित होने, पैरवी करने और कार्य करने के अधिकार के बीच अंतर किया गया है। धारा 9 स्पष्ट रूप से प्रत्येक मुख्तार को किसी भी आपराधिक न्यायालय में उपस्थित होने, पैरवी करने और कार्य करने का अधिकार देती है; हालांकि, यह दीवानी न्यायालय में ऐसा असीमित अधिकार नहीं देती है। इसके विपरीत, यह केवल इतना कहती है कि नामांकन के बाद एक मुख्तार किसी भी दीवानी न्यायालय में पैरवी कर सकता है, लेकिन धारा 11 के तहत उच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों में पैरवी करने वाले मुख्तारों के कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों को निर्धारित करने वाले नियम बना सकता है। यह हमारे लिए स्पष्ट है कि अधीनस्थ न्यायालयों में पैरवी करने वाले मुख्तारों के कार्यों और शक्तियों को निर्धारित करते समय, उच्च न्यायालय पैरवी के अधिकार को विनियमित करने के लिए उन्हें सीमित कर सकता है। अभ्यास के अधिकार से कार्यों और शक्तियों को अलग मानना गलत होगा। अभ्यास का अधिकार कार्यों और शक्तियों पर निर्भर करता है। यह भी उल्लेखनीय है कि अधिनियम की धारा 11 में प्रयुक्त अभिव्यक्ति भारतीय बार काउंसिल अधिनियम, 1926 (अधिनियम 1926 का 38वां भाग) की धारा 15 में प्रयुक्त अभिव्यक्ति से कहीं अधिक व्यापक है, जो बार काउंसिल को उच्च न्यायालय के अधिवक्ताओं के अधिकारों और कर्तव्यों के प्रावधान और विनियमन के लिए नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है। हमारा मानना है कि अश्विनी उमर घोष बनाम अरबिंदा बोस² मामले में बहुमत का निर्णय याचिकाकर्ताओं के लिए किसी भी प्रकार से सहायक नहीं है। वह निर्णय सर्वोच्च न्यायालय अधिवक्ता (उच्च न्यायालयों में अभ्यास) अधिनियम, 1951 की धारा 2 की व्याख्या पर आधारित था। उस धारा में यह प्रावधान था कि "बार काउंसिल अधिनियम या किसी

2 [1953] एस.सी.आर.1

अन्य कानून में निहित किसी भी बात के बावजूद, जो उन शर्तों को विनियमित करता है जिनके अधीन कोई व्यक्ति, जो किसी उच्च न्यायालय के अधिवक्ताओं की सूची में दर्ज नहीं है, उस उच्च न्यायालय में अभ्यास करने का हकदार हो सकता है, सर्वोच्च न्यायालय का प्रत्येक अधिवक्ता किसी भी उच्च न्यायालय में अभ्यास करने का हकदार होगा, चाहे वह उस उच्च न्यायालय का अधिवक्ता हो या न हो।" बहुमत ने यह माना कि उच्च न्यायालय द्वारा बनाया गया एक नियम, जो सर्वोच्च न्यायालय के एक अधिवक्ता को मूल पक्ष में दोहरी एजेंसी पर जोर देकर, उसके कार्य के एक अनिवार्य भाग का प्रयोग करने के अधिकार से वंचित करता है, केवल एक व्यवहारिक नियम से कहीं अधिक है और यह उसके वैधानिक अधिकार का गंभीर उल्लंघन है। और इस प्रकार का नियम बनाने की शक्ति, जब तक कि स्पष्ट रूप से आरक्षित न हो, उपरोक्त धारा 2 द्वारा प्रदत्त अधिकार के विपरीत है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि बहुमत ने यह माना कि जब तक कि विधि द्वारा शक्ति स्पष्ट रूप से आरक्षित न हो, सर्वोच्च न्यायालय अधिवक्ता (उच्च न्यायालयों में अभ्यास) अधिनियम, 1951 की धारा 2 द्वारा प्रदत्त अधिकार के विपरीत कोई नियम नहीं बनाया जा सकता। यदि यह मान लिया जाए कि अधिनियम की धारा 9 और 11 को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए और धारा 11 में उल्लिखित कार्य और शक्तियां धारा 9 में उल्लिखित अभ्यास के अधिकार से अलग नहीं हैं, तो यह स्पष्ट है कि धारा 11 में उच्च न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों में अभ्यास करने वाले मुख्तारों के कार्यों, शक्तियों और कर्तव्यों को घोषित करने वाले नियम बनाने का अधिकार स्पष्ट रूप से सुरक्षित रखा गया है। यदि अधिनियम की धारा 9 और 11 की यही सही व्याख्या है, तो *अधिनी कुमार घोष बनाम अरबिंदा बोस*³ मामले में बहुमत द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत वर्तमान मामले में याचिकाकर्ताओं के लिए सहायक नहीं है।

उपरोक्त कारणों से, हम मानते हैं कि अधिनियम की धारा 11 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों का नियम 2, नियम बनाने की शक्ति का उल्लंघन नहीं है

3 [1953] एस.सी.आर.1

और याचिकाकर्ता अधिनियम के प्रावधानों के तहत जिस पेशे में नामांकित हैं, उसका अभ्यास करने के अपने मौलिक अधिकार के उल्लंघन की शिकायत नहीं कर सकते। याचिका खारिज की जाती है। चूंकि उत्तरदाताओं की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ है, इसलिए लागत का कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।

याचिका खारिज कर दी गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।